त्रैमासिक, जनवरी-मार्च 2012, तृतीय अंक • 15 रुपये मात्र

समसामयिक सृजन

समकालीन साहित्य, शिक्षा एवं संस्कृति का संगम

युवा कविता विशेषांक

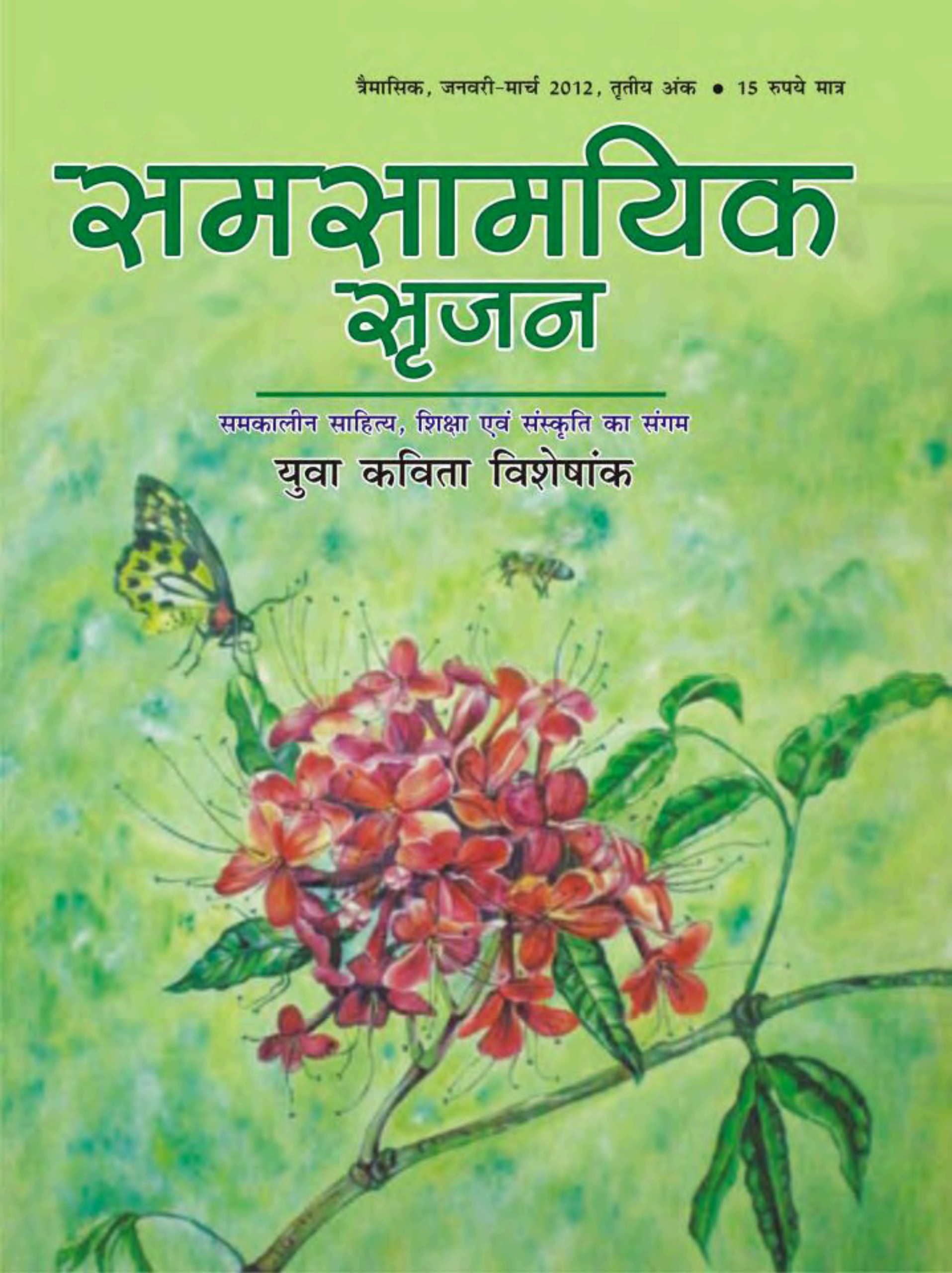

समसामयिक सृजन

समकालीन साहित्य, शिक्षा एवं संस्कृति का संगम

संरक्षक
डॉ. प्रभात कुमार

संपादकीय सलाहकार
डॉ. रमा

संपादक
महेन्द्र प्रजापति

सह-संपादक
साक्षी

संपादन-सहयोग
ताराचन्द मीणा
अज़हर खान
विजय यादव
अंकिता चौहान
आँचल धवन

कानूनी सलाहकार
दिवाकर चौधरी

विशेष सहयोग
श्री महेन्द्र गोयल

प्रचार-प्रसार
वीरेन्द्र गुप्ता
सोनू भारद्वाज

टाईप एण्ड सेटिंग
प्रदीप कुमार एवं उदय कुमार सिंह

आवरण चित्र
विभा सिंह

सहयोग राशि
प्रति मूल्य 15/- रुपए
वार्षिक 60/- रुपए
आजीवन 2,000/- रुपए

संपादकीय-कार्यालय
महेन्द्र प्रजापति द्वारा/डॉ. रमा
एच. ब्लॉक, मकान नं. 189
विकासपुरी, नई दिल्ली-110018
फोन नं. : 9891172389
Email ID : samsamyik.srijan@gmail.com

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक अथवा प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका में सभी पद अवैतनिक हैं।

विषय-सूची

पृ.सं.

आलोचना

- **युवा कविता : सारे दृश्य बदल रहे हैं** —नीलाभ **6**
- **आज का युवा कवि** —डॉ. सत्यकेतु सांकृत **19**
- **युवा काव्यदृष्टि की सूक्ष्मता** —अशोक गुप्ता **23**
- **युगीन यथार्थ का प्रतिरूप : समकालीन कविता** —डॉ. सीमा शर्मा **26**
- **समकालीन साहित्य परिदृश्य : हिन्दी कविता** —दीविक रमेश **29**
- **समकालीन कविता के पक्ष में** —आर.सी.पाण्डेय **36**
- **गुलज़ार और युवा कविता** - अभिषेक सचान **39**
- **हिन्दी दलित कविता और ओमप्रकाश वाल्मीकि** —बजरंग बिहारी तिवारी **42**

लेख

- **भूमंडलीकरण और भारत** —गोपाल प्रधान **108**
- **इक्कीसवीं सदी की चुनौतियां और हिन्दी साहित्य** —डॉ. अशोक कुमार मिश्र **110**

पुस्तक-समीक्षा

- **'अस्पताल के बाहर टेलीफोन' : साधारण का महाराग** —जाहिद ख़ान **116**
- **'न लौटे फिर कोई इस तरह' : तुम्हारे और हमारे बीच कोई नहीं** —जाहिद ख़ान **118**
- **'इन्तजार' : अस्मिता और अधिकार की लड़ाई** —अंकिता चौहान **120**
- **'हम बचे रहेंगे' : जीने की जिद** —आशु मिश्रा **122**
- **'देश-राग' : लोक दस्तावेज** (भोजपुरी) -डॉ. त्र्यम्बक नाथ त्रिपाठी **125**
- **'बोध जो अभिव्यक्ति बनना चाहता है' : मनन ही जीवन है** (असमिया) —डॉ. सुधा उपाध्याय **127**

क्रमश:....

कविताएँ

	पृ.सं.
नेहा	44
जितेन्द्र बिसारिया	47
अशोक चौहान	51
सुशील कुसुमाकर	57
कौशल तिवारी	59
नील	61
जैनेन्द्र कुमार मिश्र	64
रवि कुमार पाठक	66
सुमन कपूर	68
कमलेश कुमार	70
बृजराज सिंह	73
धीरेन्द्र अस्थाना	75
आशीष कुमार 'अंशु'	77
विजय कुमार सिंह	79
प्रज्ञा गुप्ता	81
सुमन सिंह	83
विमलेश त्रिपाठी	86
प्रियोबती निङ्थौजा	89
नितिन नारंग 'समर'	92
अजय मेहताब	94
जितेन साहा	96
अभिषेक 'अंशु'	98
सरिता सलित	100
प्रेरणा दुबे	101
अंकिता चौहान	102
विभा नायक	103
शोभा मिश्रा	104
राजकमल	105
विजय सिंह	106
आँचल धवन	107
विभा सिंह	107
साक्षी	107

निवेदन

'समसामयिक सृजन' का प्रकाशन हिन्दी भाषा, साहित्य, संस्कृति एवं संवेदना के प्रति समर्पित कुछ प्राध्यापकों, छात्रों एवं मित्रों ने मिलकर प्रारंभ किया है। आपका आर्थिक सहयोग पत्रिका को और बेहतर बनाने में हमारी सहायता करेगा। जो साहित्य प्रेमी 'समसामयिक सृजन' में आर्थिक रूप से योगदान करेंगे उनका नाम एवं परिचय पत्रिका के अंत में विशेष रूप से प्रकाशित किया जाएगा। सहयोग की न्यूनतम राशि 2500 रु. है। 5000 रु. से अधिक सहयोग देने वालों का एक आकर्षक विज्ञापन भी दिया जाएगा।

संपादक : **09871907081**

स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी–

महेन्द्र प्रजापति द्वारा H-ब्लॉक, मकान नं. 189, विकासपुरी, नई दिल्ली–110018 से प्रकाशित एवं रुचिका प्रिंटर्स, B-25, डीएसआईडीसी कॉम्पलैक्स, झिलमिल इंडस्ट्रियल एरिया, दिल्ली–110032 से मुद्रित।

संपर्क : 09871907081, 07503397249, 08800154932

संपादकीय

कविता ने अपना प्रवाह और प्रभाव दोनों खो दिया है। कविता निरा-गद्यात्मक होती जा रही है। कविता ने अपनी सरसता खो दिया है। कविता एक खेल बनकर रह गयी है। कविता दिशाहीन हो गयी है। कविता समाज से कटकर व्यक्तिगत हो गयी है। कविता का अन्त हो चुका है। समकालीन कविता पर ऐसे तमाम तरह के आरोप अखबारों, पत्रिकाओं और आलोचनात्मक पुस्तकों में मेरी नज़रों से गुजरते हुए मेरी चेतना को झकझोरते हैं। सहसा अन्दर कुछ टूटने लगता है यह सोचकर कि, हमारे एकान्त की संगिनी, चित्त का रंजन करने वाली, समाज को दिशा देने वाली कविता के अन्त की घोषणाएं हो रही हैं! ऐसे में यह चिन्ता नहीं चिन्तन का विषय हो जाता है। चिन्तन भी क्षणिक नहीं बल्कि उस समय तक के लिए, जब तक कोई निश्चित और ठोस हल न मिले।

'समकालीन-कविता' के विशाल पटल पर 'युवा-कविता' को खोजना और फिर उस पर आलोचना भी करना द्रोणागिरी पर्वत पर संजीवनी बूटी ढूंढने से कम मुश्किल काम है क्या? बहरहाल मेरी बहस 'युवा-कविता' पर ही है। साधारण सी बात है कि पिछले दो दशकों में समाज में जिस तरह का परिवर्तन हुआ है, वह निश्चित रूप से साहित्य में भी आएगा। वह परिवर्तन चाहे जितना भी कठोर हो, निर्मम हो, हमें स्वीकार तो करना ही पड़ेगा। आप लाख कहते रहिए, 'मेरी प्रेमिका का मुख चाँद की तरह है' तभी कोई मुक्तिबोध पैदा होगा और कह देगा-'चाँद का मुँह टेढ़ा है' और आपको बिना किसी विवाद के इसको स्वीकारना भी होगा क्योंकि वहीं मुक्तिबोध के समर्थन में अज्ञेय भी होंगे। जो कहेंगे 'ये प्रतिमान मैले हो गए हैं, देवता कर गए हैं इन प्रतीकों से कूच' तब आपके पास न कोई प्रश्न होगा न कोई उत्तर क्योंकि समय सिर्फ अकेले नहीं बदलता बल्कि अपने साथ अपने समाज की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों को भी बदल लेता है और इन्हीं सब से साहित्य भी बदलता है। उसे किसी भी हालात में रोका नहीं जा सकता। बदलते समय के साथ साहित्य के बदलते तेवर को भी समझना होगा तभी उसके साथ न्याय भी हो पाएगा। वैसे भी साहित्य का सामंजस्य सहृदय व्यक्ति से हो पाता है कठोर और पूर्वाग्रह से ग्रसित व्यक्ति से नहीं।

समकालीन कविता में 'भाषा' और 'विषय' दोनों में भी अविश्वसनीय परिवर्तन हुआ है। 'भाषा' बहता 'नीर' है तो 'साहित्य' उस पर सवार 'नौका' है। यह बहता नीर समय के जिन-जिन रास्तों से गुजरेगा उसका प्रभाव उसके नौका पर भी पड़ेगा। 'युवा-कविता' में भी 'कथ्य' और 'शिल्प' की दृष्टि से जो परिवर्तन हुआ है या हो रहा है उसे समय का प्रभाव ही कहा जा सकता है। मेरी बहस के केन्द्र वो लोग बिल्कुल नहीं है जो कविता का क, ख, ग भी नहीं जानते और कविताएँ लिख रहे हैं। मेरी नज़र में वो तुकबन्दी से अधिक कुछ नहीं। ऐसी कविताएँ कविता लिखने के मानसिक क्रीड़ा को शान्त करने का एक साधन मात्र है। मैं उन पर बात करना चाहता हूँ जो इस व्यस्तम् जीवनशैली में भी जहाँ रोटी की समस्या सुरसा डायन की तरह मुँह बाए खड़ी है बावजूद उसके भी कविता सृजन के लिए समय निकाल लेते हैं।

एक बात शिद्दत से कहना चाहूँगा कि, यह समय सब-कुछ छोड़कर 'साहित्य-साधना' और 'यायावरी' करने का नहीं है। आज का युवा कबीर की तरह 'लुकाठी लिए बज़ार में खड़ा नहीं हो सकता' और घोषणा भी नहीं कर सकता कि-'जो घर जारे अपना चले हमारे साथ।' न नागार्जुन की तरह पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुक्त होकर 'यायावरी' हो सकता है क्योंकि समय ऐसा नहीं है। यह समय अपने

जीविका के साधन के विरोध में आने वाली समस्याओं से लड़ते हुए, अपने परिवार और समाज की समस्याओं की पूर्ति करते हुए कविता लिखने का है। इस संबंध में युवा कवि तिवारी कौशल की 'ईश्वर' कविता को महत्वपूर्ण रूप से कोट किया जा सकता–''ईश्वर की गवेषणा में/भटकता रहा यहाँ से वहाँ/मठों के गर्भगृह में/ज्ञानियों के प्रवचन में/हिमालय के तुंग शिखरों पर/अन्ततः निराश लौट आया मैं स्वगृह को/तब मुस्कुराए ईश्वर/वृद्धा माँ के आँसुओं में/पुत्र की हँसी में/और की औट खड़ी पत्नी के सिन्दूर में।

यह बिल्कुल सही है कि कविता की पठनीयता कम हुई है शायद इसीलिए कविता में वजन कम हुआ है ऐसा नहीं कि वजन खत्म हो गया है क्योंकि युवा कवि अपनी 'विजन' के प्रति सजग दिखाई दे रहे हैं। कविता परिवेश के हिसाब से लिखी जाती है, जाहिर है 'युवा–कविता' पर कुछ भी कहा जाए उससे पहले उनका परिवेश भी समझा जाए। आज का युवा विषम परिस्थितियों में खड़ा है, डिग्री का बोझ सर पर लादे बेरोजगार युवा, ऑफिस में बॉस की बेवजह डांट खाकर हताश युवा, ऐसो आराम की जिन्दगी जीने का हुनर रखते हुए कम सैलरी में खटता युवा और अति–महत्वाकांक्षी युवा, ऐसे युवा से समाज कैसी कविता की उम्मीद कर सकता है? 'युवा–कविता' में युवा कवि वही लौटा रहा है जो समाज से उसे मिल रहा है। हम जिस संवेदना, सहानुभूति और सरसता को 'युवा' कविता में खोज रहे हैं वह भी नहीं मिलेगा क्योंकि यह उसका भी समय नहीं है। युवा कवि विमलेश त्रिपाठी की कविता 'कविता से लम्बी उदासी' की यह पंक्तियां इस संदर्भ में बहुत महत्वपूर्ण है–''जितने कम समय में लिखता हूँ मैं एक शब्द/उससे कम समय में/मेरा एक बेरोजगार भाई आत्महत्या कर लेता है/उससे भी कम समय में/बहन 'औरत से धर्मशाला' में तब्दील हो जाती है/क्या करूं कि कविता से लम्बी है समय की उदासी।''

यह समय है–बहुत बड़े परिवर्तन का, एक बहुत बड़े क्रान्ति का, सब कुछ उलटने–पलटने का। यह समय 'युवा–कविता' में सरसता खोजने का नहीं, बल्कि उसमें छुपे हुए आक्रोश को महसूस करने का है। 'युवा–कविता' में सरसता की तलाश करना युवाओं की दुखती रग पर हाथ रखना ही तो है। यही दुख जब बिना लय–ताल के कागज पर उतरता है तो आलोचकों को एक मुद्दा मिल जाता है, एक लम्बा लेख लिखने का, जिसका नायक कोई नहीं होता सिर्फ और सिर्फ कई खलनायक होते हैं–युवा, युवा कविता, कविता का विषय और कविता की भाषा। तभी युवा कवि बृजराज सिंह अपनी कविता 'खतरा' में लिखते हैं–''अभिव्यक्ति के सारे माध्यम/अब ख़तरे में है/ बल्कि अभिव्यक्ति स्वयं खतरे में पड़ गयी है घोर।''

समय के हिसाब से युवा कविता में जो परिवर्तन होना चाहिए वही हुआ है, क्योंकि अपने समय के नब्ज़ को न समझने वाले हमेशा हासिए पर रख दिए जाते हैं या समाज उन्हें जीने नहीं देता ये अलग बात है कि कभी–कभी समाज के मान्यताओं के विपरीत जाना चाहिए तभी सार्थक परिवर्तन हो पाता है लेकिन खतरा यहाँ पर भी है क्योंकि समाज की परंपरा को तोड़ने पर भी समाज चैन से जीने नहीं देता। तब यहाँ पर जरूरत होती है सामंजस्य की। चाहे वो सामंजस्य आपके मन को हो या न हो। कवि नील की यह पंक्ति देखिए–''मैंने कुछ मुखौटे खरीद लिए हैं/कल शाम थक हार कर/मुझे लगा/जब तक/दुनिया के पसंद का चेहरा ना लगाओ/दुनियाँ आपको जीने नहीं देगी।''

आलोचकों के कटघरे में खड़े जो निर्दोष 'युवा–कवि' पूरी शक्ति और सामर्थ्य से कविता सृजन में लगे हैं उन्हें मेरी शुभकामनाएँ।

'समसामयिक सृजन' का यह 'युवा कविता विशेषांक' कुछ कविताओं का संकलन मात्र नहीं है बल्कि

'युवा-कविता' के साथ कविता के अन्य क्षेत्र पर भी पूरी बहस है। मेरे आग्रह पर नीलाभ जी (सारे दृश्य बदल रहे हैं : युवा कविता पर कुछ टिप्पणी), सत्यकेतु जी (आज का युवा कवि) और अशोक गुप्त जी (युवा काव्यदृष्टि की सूक्ष्मता) ने जिस बारिकी से 'युवा-कविता' की जाँच पड़ताल की है उसने कई समस्याओं को सुलझाने के साथ कई सवाल भी खड़े किए हैं जिस पर एक लम्बी बहस की पूरी गुंजाइश है। जो फिर कभी। तीनों लेखों में 'युवा-कविता' के नब्ज़ में घुसकर चिकित्सक की तरह जाँच-परख की गयी है।

सीमा शर्मा जी (युगीन यथार्थ का प्रतिरूप : समकालीन कविता), दीविक रमेश जी (समकालीन साहित्य परिदृश्य : हिन्दी कविता) और आर.सी. पाण्डेय जी (समकालीन कविता के पक्ष में) ने समकालीन कविता के पूरे परिदृश्य को स्पष्ट किया है। संभव है कि उसके बाद कोई नयी बहस हो।

बजरंग बिहारी तिवारी जी का लेख-'हिन्दी दलित कविता और ओमप्रकाश वाल्मीकि' में दलित साहित्य के पूरे फेज को कम शब्दों में समझाने की पूरी कोशिश की है। जिस तरह से 'दलित-विमर्श' ने हिन्दी साहित्य में बहुत कम समय में अपनी पकड़ मज़बूत कर लिया है, उससे दलित कविता पर अब बड़ी बहस की आवश्यकता हो गई है लेकिन देखा जाए तो ओमप्रकाश वाल्मीकि ही उसके मेरूदण्ड है। संभव है इसलिए तिवारी जी के लेख के केन्द्र में वाल्मीकि ही आए। इसके साथ ही अभिषेक सचान जी ने 'गुलज़ार और युवा कविता' लेख में गुलज़ार और सिनेमाई कविता को आधार बनाकर 'युवा-कविता' पर बहस का एक नया अध्याय जोड़ दिया।

पूरी पत्रिका में इसके अतिरिक्त दो महत्वपूर्ण लेख और भी हैं- पहला, डॉ. गोपाल प्रधान का-''भूमंडलीकरण और भारत।'' इस लेख की उपयोगिता इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है कि, 'युवा-कविता' में भूमंडलीकरण का प्रभाव बहुत तेजी से पड़ा है साथ ही चुनी हुई कविताओं और लेखों में भी इस शब्द का पयोग भी कई बार हुआ है। भूमंडलीकरण को समझने के लिए यह लेख सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। दूसरा लेख है-'इक्कीसवीं सदी की चुनौतियाँ और हिन्दी साहित्य'', डॉ. अशोक कुमार मिश्र जी का है। अशोक जी ने इस लेख में साहित्य की सभी विधाओं पर चर्चा करते हुए समसामयिक कविता पर कम शब्दों में खूब ठोस बहस की है।

पत्रिका में 'समकालीन-कविता' के सभी बिन्दुओं को छूने की पूरी कोशिश की गयी है इसलिए कुल छः काव्य-संग्रहों की समीक्षा को स्थान दिया गया है। इस पुस्तक समीक्षा में भी कविता के परिवेश को और अधिक समझने के लिए चार हिन्दी के काव्य-संग्रहों- अस्पताल के बाहर टेलीफोन - पवन करण, न लौटे फिर कोई इस तरह -मोहन कुमार डहेरिया, इंतज़ार - कमलेश कुमारी, हम बचे रहेंगे -विलमेश त्रिपाठी के साथ एक भोजपुरी (देशराग -चन्द्रदेव यादव) और एक असमिया (बोध जो अभिव्यक्ति बनना चाहता है - राजीव बरूआ) की समीक्षा भी दी गयी है।

अंत में 'समसामयिक-सृजन' के पूरे परिवार की ओर से इतना चाहूंगा कि, 'युवा-कविता' के इस विशेषांक को निकालने के दुस्सहास में हमसे अगर कुछ त्रुटि रह गयी तो हम क्षमा चाहते हैं। अगला अंक ***''हिन्दी साहित्येतिहास- लेखन की समस्याएँ''*** *पर फिर* ***विशेषांक*** *है। स्तरीय लेखों का स्वागत है। लेख भेजने की अंतिम तिथि 30 जनवरी है।*

आपकी प्रतिक्रिया की अपेक्षित आशा में-

महेन्द्र प्रजापति